एगजीवेण अंतराणुगमेण गदियाणुवादेण णिरयगदीए णेरइयाणं अंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ १ ॥

मूलोघविसयपुच्छा किण्ण कया ? ण, मूलोघपडिबद्धकालपरूवणाभावादो। किमिदि तस्स कालो ण वुत्तो? ण, तस्साणुत्तसिद्धीदो। केवचिरमिदि वुत्ते एग-बे-तिण्णि जाव अणंतमिदि अंतरपुच्छा कदा होदि। सेसं सुगमं।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २ ॥

कुदो ? णेरइयस्स णिरयादो णिग्गयस्स तिरक्खेसु मणुस्सेसु वा गब्भोवक्कंतियपज्जत्तएसु उप्पज्जिय सव्वजहण्णाउअकालब्भंतरे णिरयाउअं बंधिय कालं करिय

एक जीवकी अपेक्षा अन्तरानुगमसे गतिमार्गणानुसार नरकगतिमें नारकी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है? ॥ १ ॥

शंका—यहां मूलोघविषयक अर्थात् गुणस्थानोंकी अपेक्षा अन्तरसम्बन्धी पृच्छा क्यों नहीं की गई।

समाधान—नहीं, क्योंकि मूलोघसम्बन्धी कालप्ररूपणाका अभाव होनेसे उक्त प्ररूपणा नहीं की गई ?

शंका—मूलोघसम्बन्धी काल क्यों नहीं बतलाया गया ?

समाधान—नहीं क्योंकि विना कहे उसकी सिद्धि हो जाती है।

'कितने काल तक' ऐसा कहनेपर क्या एक समय अन्तर होता है, क्या दो समय, क्या तीन समय, इस प्रकार अनन्त समयों तककी अन्तरसम्बन्धी पृच्छा की गयी है। शेष सूत्रार्थ सुगम है।

जघन्यसे नरकगतिमें नारकी जीवोंका अन्तर अन्तर्मुहूर्त काल तक होता है ॥ २ ॥

क्योंकि नरकसे निकलकर गर्भोपक्रान्तिक तिर्यंच जीवोंमें अथवा मनुष्योंमें उत्पन्न हो सबसे कम आयुके भीतर नरकायुको बांध, मरण कर पुनः नरकोंमें उत्पन्न

---

१ अ-आप्रत्योः 'जहण्णाउआकाल-' इति पाठः।

पुणो णिरएसुववण्णस्स जहण्णेणंतोमुहुत्तंतरुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ३ ॥

णेरइयस्स णिरयादो णिग्गंतूण अणप्पिदगदीसु आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्त-पोग्गलपरियट्टे परियट्टिदूण पच्छा णिरएसुववण्णस्स वुत्तंतरुवलंभादो ।

एवं सत्तसु पुढवीसु णेरइया ॥ ४ ॥

णेरइया इदि वुत्ते णेरइयाणं त्ति घेत्तव्वं सत्तसु पुढवीसु णेरइयाणं तिरिक्ख-मणुस्सगब्भोवक्कंतियपज्जत्तएसुप्पज्जिय सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय अप्पिदणिरएसु-प्पण्णस्स अंतरकालो सरिसो त्ति[1] वुत्तं होदि ।

तिरिक्खगदीए तिरिक्खाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ५ ॥

सुगमं ।

हुए नारकी जीवके नरकगतिमें जघन्यसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उत्कृष्टसे अनन्त काल तक नरकगतिसे नारकी जीवोंका अन्तर होता है, जो अनन्त काल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ॥ ३ ॥

क्योंकि, नारकी जीवके नरकसे निकलकर अविवक्षित गतियोंमें आवलीके असं-ख्यातवें भागप्रमाण पुद्गलपरिवर्तन काल तक परिभ्रमण करके पुनः नरकोंमें उत्पन्न होनेपर सूत्रोक्त अन्तरका प्रमाण पाया जाता है ।

इस प्रकार सातों पृथिवियोंमें नारकी जीवोंका अन्तर होता है ॥ ४ ॥

सूत्रमें जो 'णेरइया' ऐसा कहनेपर 'णेरइयाणं' ग्रहण करना चाहिये । सातों ही पृथिवियोंमें नारकी जीवोंके गर्भोपक्रान्तिक पर्याप्त तिर्यंचों व मनुष्योंमें उत्पन्न होकर जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल रहकर विवक्षित नरकोंमें उत्पन्न हुए जीवका अन्तरकाल सदृश ही होता है, ऐसा प्रस्तुत सूत्रके द्वारा कहा गया है ।

तिर्यंचगतिसे तिर्यंच जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

---

१ अ. प्रती सरिसो त्ति इति पाठः ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ६ ॥

तिरिक्खेहिंतो मणुस्सेसुप्पज्जिय खावखुद्दाभवग्गहणमेत्तकालमच्छिय पुणो तिरिक्खेसुप्पण्णस्स तदुवलंभादो ।

उक्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्तं ॥ ७ ॥

तिरिक्खस्स तिरिक्खेहिंतो णिग्गयस्स सेसगदीसु सागरोवमसदपुधत्तादो उवरि अवट्ठाणाभावादो ।

पंचिंदियतिरिक्खा पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्ता पंचिंदियतिरिक्खजोणिणी पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्ता मणुसगदीए मणुस्सा मणुसपज्जत्ता मणुसिणी मणुसअपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ८ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ९ ॥

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल तक तिर्यंच जीवोंका तिर्यंचगतिसे अन्तर होता है ॥ ६ ॥

क्योंकि, तिर्यंच जीवोंमेंसे निकलकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो कदलीघातयुक्त क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल तक रहकर पुनः तिर्यंचोंमें उत्पन्न हुए जीवके क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उत्कृष्टसे सागरोपमशतपृथक्त्वप्रमाण काल तक तिर्यंच जीवोंका तिर्यंचगतिसे अन्तर पाया जाता है ॥ ७ ॥

क्योंकि, तिर्यंच जीवके तिर्यंचोंमेंसे निकलकर शेष गतियोंमें सौ सागरोपमपृथक्त्व कालसे ऊपर ठहरनेका अभाव है ।

तिर्यंचगतिसे पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिनी, पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त, एवं मनुष्यगतिमें मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी तथा मनुष्य अपर्याप्त जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल तक उक्त तिर्यंचोंका तिर्यंचगतिसे तथा मनुष्योंका मनुष्यगतिसे अन्तर होता है ॥ ९ ॥

कुदो ? अप्पिदगदीदो णिग्गंतूण अणप्पिदगदीसुप्पज्जिय खुद्दाभवग्गहणमच्छिय पुणो अप्पिदगदिमागयस्स खुद्दाभवग्गहणमेत्तंतरुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ॥ १० ॥

कुदो ? अप्पिदगदीदो णिग्गंतूण एइंदिय-विगलिंदियादिअणप्पिदगदीसु आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्टे भमिय अप्पिदगदिमागदस्स तदुवलंभादो ।

देवगदीए देवाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ११ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १२ ॥

कुदो ? देवगदीदो आगंतूण तिरिक्ख-मणुस्सगब्भोवक्कंतियपज्जत्तएसुप्पज्जिय पज्जत्तीओ समाणिय देवाउअं बंधिय देवेसुप्पण्णस्स अंतोमुहुत्तंतरुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ॥ १३ ॥

क्योंकि, विवक्षित गतिसे निकलकर अविवक्षित गतियोंमें उत्पन्न हो व वहां क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल रहकर पुनः विवक्षित गतिमें आये हुए जीवके क्षुद्रभवग्रहण-प्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उत्कृष्टसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अनन्त काल तक पूर्वोक्त तिर्यंचोंका तिर्यंचगतिसे और मनुष्योंका मनुष्यगतिमे अन्तर होता है, जो अनन्त होता है ॥ १० ॥

क्योंकि, विवक्षित गतिसे निकलकर एकेन्द्रिय व विकलेन्द्रिय आदि अविवक्षित गतियोंमें आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण पुद्गलपरिवर्तन प्रमाण कालतक भ्रमण कर विवक्षित गतिमें आये हुए जीवके सूत्रोक्त प्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

देवगतिमें देवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ॥ ११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल तक देवोंका देवगतिमें अन्तर होता है ॥ १२ ॥

क्योंकि, देवगतिसे आकर गर्भोपक्रान्तिक पर्याप्त तिर्यंचों व उन्हें मनुष्योंमें, उत्पन्न होकर पर्याप्तियां पूर्ण कर देवायु बांध, पुनः देवोंमें उत्पन्न हुए जीवके देवगति अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उत्कृष्टसे अनन्त काल तक देवगतिसे देवोंका अन्तर होता है जो अनन्त असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है ॥ १३ ॥

कुदो ? देवगदीदो ओयरिय सेसतिसु गदीसु आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्त-पोग्गलपरियट्टे उक्कस्सेण परियट्टिदूण पुणो देवगदीए आगमणे विरोहाभावादो ।

भवणवासिय-वाणवेंतर-जोदिसिय-सोधम्मीसाणकप्पवासियदेवा देवगदिभंगो ॥ १४ ॥

जधा देवगदीए जहण्णेण अंतोमुहुत्तमुक्कस्सेण असंखेज्जपोग्गलपरियट्टमेत्तं अंतरं वुत्तं तधा एदेसिं पि जहण्णुक्कस्संतराणि वत्तव्वाणि[1] । देवा इदि वुत्ते देवाणमिदि घेत्तव्वं, 'आई-मज्झंतवण्णसरलोओ' त्ति एदेण लक्खणेण लुत्त-णं-सद्दादो ।

सणक्कुमार-माहिंदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ १५ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण मुहुत्तपुधत्तं ॥ १६ ॥

क्योंकि, देवगतिसे निकलकर शेष तीन गतियोंमें अधिकसे अधिक आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण पुद्गलपरिवर्तन काल तक परिभ्रमण कर पुनः देवगतिमें आगमन करनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

भवनवासी, वानव्यन्तर, ज्योतिषी व सौधर्म-ईशान कल्पवासी देवोंका अन्तर देवगतिके समान ही है ॥ १४ ॥

जिस प्रकार देवगतिमें जघन्यसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण और उत्कृष्टसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अन्तरकाल कहा गया है, उसी प्रकार इन भवनवासी आदि देवोंका जघन्य व उत्कृष्ट अन्तर कहना चाहिये । 'देवा' ऐसा कहनेपर 'देवाणं' ऐसा ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि "आदि, मध्य व अन्तमें आये हुए व्यंजन और स्वरोंका प्राकृतमें विकल्पसे लोप हो जाता है" इस नियमसे यहां षष्ठी विभक्तिके 'णं' शब्दका लोप हो गया है ।

सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्पवासी देवोंका देवगतिमें अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ १५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे मुहूर्तपृथक्त्व काल तक सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्पवासी देवोंका देवगतिमें अन्तर होता है ॥ १६ ॥

---

१ मु. प्रती स्संतराणि देवा इदि पाठः ।

कुदो ? सणक्कुमार-माहिंददेवाणं तिरिक्ख-मणुस्साउअं बंधमाणाणमाउअस्स जहण्णट्ठिदीए मुहुत्तपुधत्तपमाणत्तादो । तिरिक्ख-मणुस्साउअं जहण्णेण मुहुत्तपुधत्तमेत्तं बंधिय तिरिक्खेसु मणुस्सेसु वा उप्पज्जिय परिणामपच्चएण पुणो सणक्कुमार-माहिंदेसु आउअं बंधिय सणक्कुमार-माहिंदेसुप्पण्णाणं जहण्णमंतरं होदि त्ति वुत्तं होदि ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ १७ ॥

सुगमं ।

बम्हबम्हुत्तर-लांतवकाविट्ठकप्पवासियदेवाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ १८ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण दिवसपुधत्तं ॥ १९ ॥

कुदो ? एदेहि बज्झमाणआउअस्स दिवसपुधत्तादो हेट्ठा ट्ठिदिबंधाभावादो ।

क्योंकि, तिर्यंच या मनुष्य आयुको बांधनेवाले सनत्कुमार और माहेन्द्र देवोंके तिर्यंच व मनुष्य भवसम्बन्धी जघन्य स्थितिका प्रमाण मुहूर्तपृथक्त्व पाया जाता है । इसी मुहूर्तपृथक्त्वप्रमाण जघन्य तिर्यंच व मनुष्य आयुको बांध कर तिर्यंचोंमें व मनुष्योंमें उत्पन्न होकर परिणामोंके निमित्तसे पुनः सनत्कुमार और माहेन्द्र देवोंकी आयु बांधकर सनत्कुमार-माहेन्द्र देवोंमें उत्पन्न हुए जीवोंका मुहूर्तपृथक्त्वप्रमाण जघन्य अन्तर होता है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है ।

उत्कृष्टसे अनन्त काल तक सनत्कुमार और माहेन्द्र देवोंका देवगतिसे अन्तर होता है जो अनन्तकाल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है ॥ १७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर व लान्तव-कापिष्ठ कल्पवासी देवोंका देवगतिमें अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ १८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे दिवसपृथक्त्वमात्र ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर और लान्तव-कापिष्ठ कल्पवासी देवोंका देवगतिमें अन्तर होता है ॥ १९ ॥

क्योंकि, उक्त देवों द्वारा जो आगामी भवकी आयु बांधी जाती है उसका स्थितिबन्ध दिवसपृथक्त्वसे कम नहीं होता है ।

अणुव्वय-महव्वएहि विणा तिरिक्ख मणुस्सा गब्भादो अणिक्खंता चेव कधं देवेसुप्पज्जंति ? ण, परिणामपच्चएण तिरिक्ख-मणुस्सपज्जत्ताणं दिवसपुधत्तजीवियाणं तत्थुप्पत्तीए विरोहाभावादो ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ २० ॥

सुगमं ।

सुक्कमहासुक्क-सदारसहस्सारकप्पवासियदेवाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ २१ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण पक्खपुधत्तं ॥ २२ ॥

कुदो ? एदेहि बज्झमाणआउअस्स पक्खपुधत्तादो हेट्ठा जहण्णट्ठिदिबंधाभावादो ।

शंका—अणुव्रत और महाव्रतके विना गर्भसे नहीं निकले हुए ही तिर्यंच और मनुष्य देवोंमें कैसे उत्पन्न होते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि परिणामोंके निमित्तसे दिवसपृथक्त्वप्रमाण जीवित रहनेवाले तिर्यंच व मनुष्य पर्याप्तक जीवोंके देवोंमें उत्पन्न होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

उत्कृष्टसे अनन्त काल तक ब्रह्मब्रह्मोत्तर व लान्तव-कापिष्ट देवोंका देवगतिमें अन्तर होता है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है ॥ २० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

शुक्र-महाशुक्र और शतार-सहस्रार कल्पवासी देवोंका देवगतिमें अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ २१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

कमसे कम पक्षपृथक्त्व काल तक शुक्र-महाशुक्र और शतार-सहस्रार कल्पवासी देवोंका देवगतिमें अन्तर होता है ॥ २२ ॥

क्योंकि, उक्त देवों द्वारा बांधी जानेवाली आयुका जघन्य स्थितिबन्ध पक्षपृथक्त्वसे कम नहीं होता ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ २३ ॥

सुगमं ।

आणदपाणद-आरणअच्चुदकप्पवासियदेवाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ २४ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण मासपुधत्तं ॥ २५ ॥

कुदो ? एदेहि बज्झमाणमणुस्साउअस्स मासपुधत्तादो हेट्ठा जहण्णट्ठिदिबंधाभावादो । एदे मणुस्सोववाइणो मणुस्सा वि गब्भादिअट्ठवस्सेसु गदेसु अणुव्वय-महव्वयाणं गाहिणो । ण च अणुव्वय-महव्वएहि विणा एदेसुप्पत्ती अत्थि, तहोवदेसाभावादो । तदो ण मासपुधत्तंतरं जुज्जदे, किंतु वासपुधत्तंतरेण होदव्वमिदि? एत्थ परिहारो वुच्चदे । तं

उत्कृष्टसे अनन्त काल तक उक्त देवोंका देवगतिमें अन्तर होता है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है ॥ २३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

आनत-प्राणत और आरण-अच्युत कल्पवासी देवोंका देवगतिमें अन्तर कितने काल तक रहता है ? ॥ २४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे मासपृथक्त्व तक उक्त देवोंका देवगतिमें अन्तर होता है ॥ २५ ॥

क्योंकि, आनत, प्राणत, आरण व अच्युत कल्पवासी देवों द्वारा बांधी जानेवाली मनुष्यायुका स्थितिबन्ध कमसे कम मासपृथक्त्वसे नीचे नहीं होता है ।

शंका— ये मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले मनुष्य भी और गर्भसे लेकर आठ वर्ष व्यतीत हो जानेपर अणुव्रत व महाव्रतोंको ग्रहण करनेवाले होते हैं । और अणुव्रतोंको व महाव्रतोंको ग्रहण न करनेवाले मनुष्योंकी आनत आदि देवोंमें उत्पत्ति नहीं होती, क्योंकि वैसा उपदेश नहीं पाया जाता । अतएव आनत आदि चार देवोंका मासपृथक्त्व अन्तर कहना युक्त नहीं है, किन्तु उनका अन्तर वर्षपृथक्त्व होना चाहिये ?

समाधान— उक्त शंकाका परिहार कहते हैं । वह इस प्रकार है— अणुव्रत व

जहा– ण च अणुव्वद-महव्वदेहि संजुत्ता चेव तिरिक्ख-मणुस्सा आणद-पाणदवेवेसुप्पज्जंति त्ति णियमो अत्थि, तिरिक्खअसंजदसम्माइट्ठीणं छरज्जुपोसणसुत्तेण सह विरोहादो। ण च आणद-पाणदअसंजदसम्माइट्ठिणो मणुस्साउअस्स जहण्णट्ठिदिं बंधमाणा वासपुधत्तादो हेट्ठा बंधंति, महाबंधे जहण्णट्ठिदिबंधद्धाछेदे सम्माइट्ठीणमाउअस्स वासपुधमेत्तट्ठिदिपरूवणादो। तदो आणद-पाणदमिच्छाइट्ठिस्स मणुसाउअं मासपुधत्तमेत्तं बंधिय पुणो मणुस्सेसुप्पज्जिय मासपुधत्तं जीविदूण पुणो सण्णिपंचिंदियतिरिक्खसम्मुच्छिमपज्जत्तएसु अंतोमुहुत्ताउएसुववज्जिय पज्जत्तयदो होदूण संजमासंजमं पडिवज्जिय आणदादिसु आउअं बंधिय उप्पण्णस्स जहण्णमंतरं होदि त्ति वत्तव्वं।

उक्कस्समणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ २६ ॥

सुगमं।

णवगेवज्जविमाणवासियदेवाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ २७ ॥

सुगमं।

महाव्रतोंसे संयुक्त ही तिर्यंच व मनुष्य आनत-प्राणत देवोंमें उत्पन्न हो ऐसा नियम नहीं है, क्योंकि ऐसा माननेपर तो तिर्यंच असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका जो छह राजु स्पर्शन बतलानेवाला सूत्र है उससे विरोध होता है। (देखो षट्खंडागम, जीवट्ठाण, स्पर्शनानुगम, सूत्र २८ व टीका, पुस्तक ४, पृ० २०७ आदि)। और आनत-प्राणत कल्पवासी असंयतसम्यग्दृष्टि देव मनुष्यायुकी जघन्य स्थिति बांधते हुए वे वर्षपृथक्त्वसे कमकी आयुस्थिति नहीं बांधते, क्योंकि महाबन्धमें जघन्य स्थितिबन्धके कालविभागमें सम्यग्दृष्टि जीवोंकी आयुस्थितिका प्रमाण वर्षपृथक्त्वमात्र प्ररूपित किया गया है। अतः आनत-प्राणत कल्पवासी मिथ्यादृष्टि देवके मासपृथक्त्वप्रमाण मनुष्यायु बांधकर फिर मनुष्योंमें उत्पन्न हो मासपृथक्त्व जीवित रहकर पुनः अन्तर्मुहूर्तप्रमाण आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच सम्मूर्च्छन पर्याप्त जीवोंमें उत्पन्न होकर पर्याप्तक हो संयमासंयम ग्रहण करके आनतादि कल्पोंकी आयु बांधकर वहां उत्पन्न हुए जीवके सूत्रोक्त मासपृथक्त्वप्रमाण जघन्य अन्तरकाल होता है, ऐसा कहना चाहिये।

उत्कृष्टसे अनन्त काल आनत-प्राणत और आरण-अच्युत कल्पवासी देवोंका अन्तर होता है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता है ॥ २६ ॥

यह सूत्र सुगम है।

नौ ग्रैवेयक विमानवासी देवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ २७ ॥

यह सूत्र सुगम है।

जहण्णेण वासपुधत्तं ॥ २८ ॥

कुदो ? वासपुधत्तादो हेट्ठा आउअस्स जहण्णट्ठिदिबंधाभावादो ।

उक्कसेण्ण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ २९ ॥

सुगमं[1] ।

मिच्छाविट्ठीणमणंतसंसाराणमेत्थ संभवादो ।

अणुदिस जाव अवराइदविमाणवासियदेवाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ३० ॥

सुगमं ।

जहण्णेण वासपुधत्तं ॥ ३१ ॥

कुदो ? सम्माविट्ठीणं वासपुधत्तादो हेट्ठा आउअस्स जहण्णट्ठिदिबंधाभावादो ।

उक्कस्सेण सागरोवमाणि सादिरेयाणि ॥ ३२ ॥

जघन्यसे वर्षपृथक्त्व काल तक नौ ग्रैवेयक विमानवासी देवोंका अन्तर होता है ॥ २८ ॥

क्योंकि, नौ ग्रैवेयक विमानवासी देव वर्षपृथक्त्वसे नीचेकी जघन्य आयुस्थिति बांधते ही नहीं है ।

उत्कृष्टसे अनन्त काल तक नौ ग्रैवेयक विमानवासी देवोंका अन्तर होता है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण होता हैं ॥ २९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

क्योंकि, जिन्हें अभी अनन्त काल तक संसारमें परिभ्रमण करना शेष है, ऐसे मिथ्यादृष्टि जीवोंका भी नौ ग्रैवेयकोंमें होना संभव है ।

अनुदिश आदि अपराजित पर्यन्त विमानवासी देवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ३० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे वर्षपृथक्त्व काल तक अनुदिशसे लेकर अपराजित पर्यन्त विमानवासी देवोंका अन्तर होता है ॥ ३१ ॥

क्योंकि, सम्यग्दृष्टि जीवोंके आयुका जघन्य स्थितिबंध वर्षपृथक्त्वसे नीचे नहीं होता ।

उत्कृष्टसे सातिरेक दो सागरोपमप्रमाण काल तक अनुदिशसे लेकर अपराजित पर्यन्त विमानवासी देवोंका अन्तर होता है ॥ ३२ ॥

---

१ मु. प्रती सुगमं इति पाठो नास्ति ।

कुदो ? अणुदिसादिदेवस्स पुव्वकोडाउअमणुसेसुप्पज्जिय पुव्वकोडिं जीविदूण सोहम्मीसाणं गंतूण तत्थ अड्ढाइज्जसागरोवमाणि गमिय पुणो पुव्वकोडाउअमणुस्सेसुप्पज्जिय संजमं घेत्तूण अप्पप्पणो विमाणम्मि उप्पण्णस्स सादिरेयवेसागरोवममेत्तंतरुवलंभादो ।

सव्वट्ठसिद्धिविमाणवासियदेवाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ३३ ॥

सुगमं ।

णत्थि अंतरं णिरंतरं ॥ ३४ ॥

कुदो ? सव्वट्ठसिद्धीदो मणुसगइमोइण्णस्स मोक्खं मोत्तूणण्णत्थ गमणाभावादो । 'णत्थि अंतरं णिरंतरं' इदि पुणरुत्तदोसप्पसंगादो दोण्णमेक्कदरस्स संगहो कायव्वो । ण एस दोसो, दो णए अवलंबिय ट्ठिददोण्हं पि सिस्साणमणुग्गहट्ठं परूवयंतस्स पुणरुत्त-

---

क्योंकि, अनुदिशादि देवके पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर पूर्वकोटि काल तक जी कर सौधर्म-ईशान स्वर्गको जाकर वहां अढाई सागरोपम काल व्यतीत कर पुनः पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर संयमको ग्रहण कर अपने अपने विमानमें उत्पन्न होने पर उनका अन्तरकाल सातिरेक दो सागरोपमप्रमाण प्राप्त होता है ।

सर्वार्थसिद्धिविमानवासी देवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ३३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सर्वार्थसिद्धिविमानवासी देवोंका अन्तर नहीं होता वह गति निरन्तर है ॥ ३४ ॥

क्योंकि, सर्वार्थसिद्धिसे मनुष्यगतिमें उतरनेवाले जीवका मोक्षके सिवाय अन्यत्र गमन नहीं होता ।

शंका—'सर्वार्थसिद्धि विमानवासियोंका कोई अन्तरकाल नहीं होता, वह गति निरन्तर है' ऐसा कहनेमें पुनरुक्ति दोषका प्रसंग आता है, अतएव दो उक्तियोंमेंसे किसी एकका ही संग्रह करना चाहिये । अर्थात् या तो 'अन्तरकाल नहीं होता' इतना कहना चाहिये, या 'निरन्तर है' इतना ही कहना चाहिये ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक इन दो नयोंका अवलम्बन करनेवाले दोनों प्रकारके शिष्योंके अनुग्रहके लिये उक्त प्रकारसे प्ररूपण करनेवाले सूत्रकारके पुनरुक्ति दोष नहीं आता । 'अन्तर नहीं है' यह

दोसाभावादो। णत्थि अंतरमिदि वयणं पज्जवट्ठियणयट्ठिवसिस्साणमणुग्गहकारयं विहिवदिरित्तपडिसेहे चेव वावदत्तादो। णिरंतरमिदि वयणं दव्वट्ठियसिस्साणुग्गाहयं, पडिसेहवदिरित्तविहीए पदुप्पायणादो। सेसं सुगमं।

इंदियाणुवादेण एइंदियाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ३५ ॥

एगवारपुच्छादो चेव सयलत्थपरूवणाएसंभवादो[1] किमट्ठं पुणो पुणो पुच्छा कीरदे ? ण इमाणि पुच्छासुत्ताणि, किंतु आइरियाणमासंकियवयणाणि उत्तरसुत्तुप्पत्तिणिमित्ताणि, तदो ण दोसो त्ति।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ३६ ॥

सुगमं।

उक्कस्सेण बेसागरोवमसहस्साणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि ॥ ३७ ॥

वचनपर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करनेवाले शिष्योंका अनुग्रहकारी है, क्योंकि यह वचन विधिसे रहित प्रतिषेधमें व्यापार करता है। 'निरन्तर है' यह वचन द्रव्यार्थिक शिष्योंका अनुग्राहक है, क्योंकि वह प्रतिषेधसे रहित विधिका प्रतिपादक है।

शेष सूत्रार्थ सुगम है।

इन्द्रियमार्गणानुसार एकेन्द्रिय जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ३५ ॥

शंका—एक बार पृच्छासेही समस्त अर्थका प्ररूपणाका होना सम्भव होनेसे, फिर बार बार यह पृच्छा क्यों की जाती है ?

समाधान—ये पृच्छासूत्र नहीं हैं, किन्तु आचार्योंके आशंकात्मक वचन हैं जो अगले सूत्रकी उत्पत्तिके निमित्तके रूपमें कहे गये हैं। इसलिये कोई दोष नहीं है।

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल तक एकेन्द्रिय जीवोंका अन्तर होता है ॥ ३६ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उत्कृष्टसे पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक दो हजार सागरोपमप्रमाण काल तक एकेन्द्रिय जीवोंका अन्तर होता है ॥ ३७ ॥

---

१ म. प्रतौ परूवणासंभवादो इति पाठः।

कुदो ? एइंदिएहिंतो णिग्गयस्स तसकाइएसु चेव भमंतस्स पुव्वकोडिपुधत्तब्भहियबेसागरोवमसहस्समेत्ततसट्ठिदीदो उवरि तत्थ अवट्ठाणाभावादो ।

बादरएइंदिय-पज्जत्त-अपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ३८ ॥

सुगममेदमासंकासुत्तं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ३९ ॥

सुगमं ।

उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ॥ ४० ॥

कुदो ? बादरेइंदिएहिंतो णिग्गंतूण सुहुमेइंदिएसु असंखेज्जा[1] लोगमेत्तकालादो उवरि अवट्ठाणाभावादो। होदु णाम एदमंतरं बादरेइंदियाणं, ण तेसिं पज्जत्ताणमपज्जत्ताणं च, सुहुमेइंदिएसु अणप्पिदबादरेइंदिएसु च परियट्टंतस्स पुव्विल्लंतरादो अइमहल्लंतर-

---

क्योंकि, एकेन्द्रिय जीवोंमेंसे निकल कर त्रसकायिक जीवोंमें ही भ्रमण करनेवाले जीवके पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक दो हजार सागरोपमप्रमाण स्थितिसे ऊपर त्रसकायिकोंमें रहनेका अभाव है ।

बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त व बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ३८ ॥

यह आशंकासूत्र सुगम है ।

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहणमात्र काल तक उक्त एकेन्द्रिय जीवोंका अन्तर होता है ॥ ३९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उत्कृष्टसे बहुत असंख्यात लोकप्रमाण काल तक उक्त एकेन्द्रिय जीवोंका अन्तर होता है ॥ ४० ॥

क्योंकि, बादर एकेन्द्रिय जीवोंमेंसे निकलकर सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें बहुत असंख्यात लोकप्रमाण कालसे ऊपर रहना संभव नहीं है ।

शंका—यह बहुत असंख्यात लोकप्रमाण कालका अन्तर बादर एकेन्द्रिय (सामान्य) जीवोंका भले ही हो पर यह अन्तर पृथक् पृथक् बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकों व अपर्याप्तकोंका नहीं हो सकता, क्योंकि, सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें तथा अविवक्षित (पर्याप्त या अपर्याप्त) बादर एकेन्द्रियोंमें परिभ्रमण करनेवाले उसके पूर्वोक्त अन्तरसे

---

[1] मु. असंखेज्ज इति पाठः ।

वलंभादो। होदु णाम पुव्विल्लंतरादो इमस्स अंतरस्स अइमहल्लत्तं, तो वि एदेसिमंतरकालो पुव्विल्लंतरकालोव्व[1] असंखेज्जलोगमेत्तो चेव, णाणंतो। कुदो ? अणंततरुवदेसाभावादो।

सुहुमेइंदिय-पज्जत्त-अपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ४१ ॥

सुगमं।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ४२ ॥

एदं पि सुगमं।

उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जासंखेज्जाओ ओसप्पिणीओ-उस्सप्पिणीओ ॥ ४३ ॥

कुदो ? सुहुमेइंदिएहिंतो णिग्गयस्स बादरेइंदिएसु चेव भमंतस्स बादरेइंदिय-

---

अधिक बड़ा अन्तरकाल प्राप्त होता है ?

समाधान—पूर्वोक्त अन्तरसे यह पर्याप्तक व अपर्याप्तकोंका अलग अलग अन्तर काल अधिक बड़ा भले ही हो पर तो भी इन पर्याप्त व अपर्याप्त एकेन्द्रिय बादर जीवोंका अन्तर पूर्वोक्त अन्तरकालके समान असंख्यात लोकप्रमाण रहता है। अनन्त नहीं होता, क्योंकि, बादर एकेन्द्रिय जीवोंके अनन्त कालप्रमाण अन्तरका उपदेश नहीं पाया जाता।

सूक्ष्म एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ४१ ॥

यह सूत्र सुगम है।

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहण काल तक सूक्ष्म एकेन्द्रिय व उनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका अन्तर होता है ॥ ४२ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उत्कृष्टसे असंख्यातात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी कालप्रमाण सूक्ष्म एकेन्द्रिय व उनके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका अन्तर होता है, जो अंगुलके असंख्यात वें भाग प्रमाण होता है ॥ ४३ ॥

क्योंकि, सूक्ष्म एकेन्द्रियोंसे निकलकर बादर एकेन्द्रियोंमें ही भ्रमण करनेवाले

---

१ अ. क. प्रत्योः कालो विव इति पाठः।

ट्ठिदीदो उवरि अवट्ठाणाभावादो। तेसिं पज्जत्तापज्जत्ताणं एवम्हादो अंतरादो अहियमंतरं होदि, अणप्पिदसुहुमेइंदिएसु वि संचारोवलंभादो। किंतु तो वि अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तं चेव अंतरं होदि, अण्णोवएसाभावादो।

बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदिय-पंचिंदियाणं तस्सेव पज्जत्त-अपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ४४ ॥

सुगमं।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ३९ ॥

सुगमं।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ४६ ॥

कुदो ? अप्पिदइंदिएहिंतो[1] णिग्गयस्स अणप्पिदइंदियादिसु आवलियाए असंखे-

---

जीवके बादर एकेन्द्रियकी स्थितिसे ऊपर वहां रहनेका अभाव है। उक्त जीवोंके पर्याप्त व अपर्याप्तका (अलग अलग) अन्तर यद्यपि पूर्वोक्त प्रमाणसे अधिक होता है, क्योंकि, उन जीवोंका अविवक्षित सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें भी संचार पाया जाता है, किन्तु फिर भी अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण ही अन्तर होता है, क्योंकि इस प्रमाणसे अधिक प्रमाणका अन्य कोई उपदेश नहीं पाया जाता।

द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीवोंका तथा उन्हींके पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ४४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहण काल तक द्वीन्द्रियादि जीवोंका अन्तर होता है ॥ ४५ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उत्कृष्ट अनन्त काल तक उक्त द्वीन्द्रियादि जीवोंका अन्तर होता है, जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर होता है ॥ ४५ ॥

क्योंकि, विवक्षित इन्द्रियोंवाले जीवोंमेंसे निकल कर अविवक्षित एकेन्द्रिय

---

१ प्रतिषु 'अप्पिदेइंदिएहिंतो' इति पाठः।

ज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्टाणि परियट्टणे विरोहाभावादो ।

कायाणुवादेण पुढविकाइय-आउकाइय-तेउकाइय-वाउकाइय-बादर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि? ॥४७॥

सुगमं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ४८ ॥

एदं पि सुगमं ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ४९ ॥

कुदो ? अप्पिदकायं मोत्तूण अणप्पिदेसु वणप्फदिकायादिसु आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्टाणि परियट्टिदुं संभवोवलंभादो ।

वणप्फदिकाइयणिगोदजीवबादर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ५० ॥

आदि जीवोंमें आवलीके असंख्यातवें भाग पुद्गलपरिवर्तन प्रमाण काल तक भ्रमण करनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

कायमार्गणानुसार पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेजकायिक, वायुकायिक, बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ॥ ४७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

कमसे कम क्षुद्रभवग्रहण काल तक पृथिवीकायिक आदि उक्त जीवोंका अन्तर होता है ॥ ४८ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उत्कृष्टसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अनन्त काल तक उक्त पृथिवीकायिक आदि जीवोंका अन्तर होता है ॥ ४९ ॥

क्योंकि, विवक्षित कायको छोडकर अविवक्षित वनस्पतिकाय आदि जीवोंमें आवलीके असंख्यातवें भागमात्र पुद्गलपरिवर्तन भ्रमण करना संभव है ।

वनस्पतिकायिक निगोद बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ५० ॥

सुगमं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ५१ ॥

एदं पि सुगमं ।

उक्कस्सेणअसंखेज्जा लोगा ॥ ५२ ॥

कुदो ? अप्पिदवणप्फदिकायादो णिग्गयस्स अणप्पिदपुढवीकायादिसु चेव हिंडंतस्स असंखेज्जलोगं मोत्तूण अण्णस्स अंतरस्स असंभवादो । सेसं सुगमं ।

बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरपज्जत्त-अपज्जत्ताणमंतरं[1] केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ५३ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ५४ ॥

एदं पि सुगमं ।

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल तक उक्त वनस्पतिकायिक निगोद जीवोंका अन्तर होता है ॥ ५१ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उत्कृष्टसे असंख्यात लोकप्रमाण काल तक उक्त वनस्पतिकायिक निगोद जीवोंका अन्तर होता है ॥ ५२ ॥

क्योंकि, विवक्षित वनस्पतिकायसे निकलकर अविवक्षित पृथिवीकायादिकोंमें ही भ्रमण करनेवाले जीवके असंख्यात लोकप्रमाण कालको छोडकर अन्य काल प्रमाण अन्तर होना असंभव है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल तक बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका अन्तर होता है ॥ ५४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

---

१ म. प्रती—सरीरपज्जत्ताणमंतरं इति पाठः ।

उक्कस्सेण अड्ढाइज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ५५ ॥

कुदो ? अप्पिदवणप्फदिकाइएहिंतो[1] णिग्गयस्स अणप्पिदणिगोदजीवादिसु भमंतस्स अड्ढाइज्जपोग्गलपरियट्टेहिंतो अहियअंतराणुवलंभादो ।

तसकाइय-तसकाइयपज्जत्त-अपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ५६ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ५७ ॥

एदं पि सुगमं ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ५८ ॥

कुदो ? अप्पिदतसकाइएहिंतो णिग्गंतूण अणप्पिदवणप्फदिकाइयादिसु आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्टाणमंतरसण्णिदाणमुवलंभादो ।

उत्कृष्टसे अधिक अढाई पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंका अन्तर होता है ॥ ५५ ॥

क्योंकि, विवक्षित वनस्पतिकायिक जीवोंमेंसे निकलकर अविवक्षित निगोद आदि जीवोंमें भ्रमण करनेवाले जीवके अढाई पुद्गलपरिवर्तनोंसे अधिक अन्तरकाल नहीं पाया जा सकता ।

त्रसकायिक और त्रसकायिक पर्याप्त व अपर्याप्त जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ॥ ५६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण काल तक उक्त त्रसकायादि जीवोंका अन्तर होता है ॥ ५७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उत्कृष्टसे अनन्त काल तक त्रसकायादि उक्त जीवोंका अन्तर होता है, जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाणके बराबर है ॥ ५८ ॥

क्योंकि, विवक्षित त्रसकायिक जीवोंमेंसे निकलकर अविवक्षित वनस्पतिकायादि जीवोंमें आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अन्तरकाल पाया जाता है ।

---

१ अ. प्रतौ--काएहिंतो इति पाठः ।

जोगाणुवादेण पंचमणजोगि-पंचवचिजोगीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ५९ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ६० ॥

कुदो ? मणजोगादो कायजोगं वचिजोगं वा गंतूण सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो मणजोगमागदस्स जहण्णेणंतोमुहुत्तंतरुवलंभादो । सेसचत्तारिमणजोगीणं पंचवचि-जोगीणं च एवं चेव अंतरं परूवेयव्वं, भेदाभावादो । एत्थ एगसमओ किण्ण लब्भदे ? ण, वाघादिदे मदे वा मण-वचिजोगाणमणंतरसमए अणुवलंभादो ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ ६१ ॥

योगमार्गणानुसार पांच मनोयोगी और पांच वचनयोगी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ५९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

जघन्यसे पांच मनोयोगी और पांच वचनयोगी जीवोंका अन्तर अन्तर्मुहूर्त-प्रमाण होता है ॥ ६० ॥

क्योंकि, मनोयोगसे काययोगमें अथवा वचनयोगमें जाकर सबसे कम अन्तर्मुहूर्त प्रमाणकाल तक रहकर पुन: मनोयोगमें आनेवाले जीवके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर पाया जाता है ।

शेष चार मनोयोगी और पांच वचनयोगी जीवोंका भी इसी प्रकार अन्तर प्ररूपित करना चाहिये, क्योंकि इस अपेक्षासे उन सबमें कोई अन्तर नहीं है ।

शंका— इन पांच मनोयोगी और पांच वचनयोगी जीवोंका एक योगसे दूसरेमें जाकर पुन: उसी योगमें लौटनेपर एक समयप्रमाण अन्तर क्यों नहीं पाया जाता ?

समाधान— नहीं, क्योंकि जब एक मनोयोग या वचनयोगका विघात हो जाता है, या विवक्षित योगवाले जीवका मरण हो जाता है, तब केवल एक समयके अन्तरसे पुन: अनन्तर समयमें उसी मनोयोग या वचनयोगकी प्राप्ति नहीं हो सकती ।

उत्कृष्टसे अनन्त काल तक पांच मनोयोगी और वचनयोगी जीवोंका जो अंतर होता है वह असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण के बराबर होता है ॥ ६१ ॥

कुदो ? मणजोगादो वचिजोगं गंतूण तत्थ सव्वुक्कस्समद्धमच्छिय पुणो कायजोगं गंतूण तत्थ वि सव्वचिरं कालं गमिय एइंदिएसुप्पज्जिय आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्टणाणि परियट्टिय पुणो मणजोगं गदस्स तदुवलंभादो। सेसचत्तारिमणजोगीणं पंचवचिजोगीणं च एवं चेव अंतरं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो।

कायजोगीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? ॥ ६२ ॥

सुगमं।

जहण्णेण एगसमओ ॥ ६३ ॥

कुदो ? कायजोगादो मणजोगं वचिजोगं वा गंतूण एगसमयमच्छिय विदियसमए मुदे वाघादिदे वा कायजोगं गदस्स एगसमयअंतरुवलंभादो।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ ६४ ॥

कुदो[1] ? कायजोगादो मणजोगं वचिजोगं च परिवाडीए गंतूण दोसु वि सव्वुक्कस्सकालमच्छिय पुणो कायजोगमागदस्स अंतोमुहुत्तमेत्तंतरुवलंभादो।

क्योंकि, मनयोगसे वचनयोगमें जाकर वहां अधिक काल तक रहकर पुनः काययोगमें जाकर और वहां भी सबसे अधिक काल व्यतीत करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण पुद्गलपरिवर्तनमें परिभ्रमण कर पुनः मनयोगमें आये हुए जीवके उक्त प्रमाण अन्तरकाल पाया जाता है।

शेष चार मनयोगी और पांच वचनयोगी जीवोंका अन्तरकाल इसी प्रकार प्ररूपित करना चाहिये, क्योंकि, इस अपेक्षासे उनमें कोई विशेषता नहीं है।

काययोगी जीवोंका अन्तर कितने काल तक होता है ? ॥ ६२ ॥

यह सूत्र सुगम है।

जघन्यसे एक समय तक काययोगी जीवोंका अन्तर होता है ॥ ६३ ॥

क्योंकि, काययोगसे मनयोगमें या वचनयोगमें जाकर एक समय रहकर दूसरे समयमें मरण करने या योगके व्याघातित होनेपर पुनः काययोगको प्राप्त हुए जीवके एक समयका जघन्य अन्तर पाया जाता है।

काययोगी जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त होता है ॥ ६४ ॥

क्योंकि, काययोगसे मनयोग और वचनयोगमें क्रमशः जाकर और उन दोनों ही योगोंमें उनके सर्वोत्कृष्ट काल तक रहकर पुनः काययोगमें आये हुए जीवके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण काययोगका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है।

---

1 अ. क. प्रत्योः कुदो इति पाठो नास्ति।